P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-8* (Part-2) April- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

समीक्षक और शोधक डॉ. 'तरूण'

आशुतोष मिश्र
सहायक प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
मंगलौर, हरिद्वार,
उत्तराखण्ड, भारत

अनुपमा त्रिपाठी
विभागाध्यक्ष,
हिन्दी विभाग,
डी. बी. एस. पी.जी. कॉलेज,
देहरादून, उत्तराखण्ड, भारत

सारांश

डॉ.रामेश्वरलाल खंडेलवाल'तरूण'मनस्वी विद्वान,सफल शिक्षक और प्रख्यात कवि थे। उनके साहित्य में राष्ट्र प्रेम की भावना परिलक्षित होती है। सहृदय कवि ने माँ सरस्वती की सतत साधना करते हुए अपनी साहित्य संपदा में अपूर्व श्रीवृद्धि की है। उनकी यह संपदा से अनुसंधान करने वालों के लिए मील का पत्थर साबित होगी। उनकी साहित्य संपदा से आम आदमी भारतीय संस्कृति को आसानी से आत्मसात् कर पायेगा। उनके साहित्य में कवि, लेखक, समालोचक, समीक्षक तथा शिक्षक सभी के लिए पर्याप्त स्थान है।

मुख्य शब्द : तरूण के काव्य में प्रकृति, आधुनिक हिंदी कविता में प्रकृति चित्रण, जयशंकर प्रसाद वस्तु और कला।

प्रस्तावना

डॉ रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरूण' अपनी अनुसन्धानपरक आलोचना प्रवृत्ति के कारण विषय के मूल में, उसकी अन्तरतह में जाकर गूढ़–निगूढ़ तत्वों को उकेरने की कला में निष्णात हैं। परिणामतः विषय की सूक्ष्मता उनकी दृष्टि से कहीं भी ओझल नहीं हो पाई है और प्रकृत विषय वस्तु एवं शिल्प की ऐतिहासिक अन्वेषणपरक समालोचना हमारे सामने प्रस्तुत हो सकी है। उनमें हमें एक ओर विषय–प्रतिपादन की रसज्ञता तथा मार्मिकता का परिचय मिलता है; वहीं दूसरी ओर आलोचना–प्रत्यालोचना के गहरे तेवरों के भी संदर्शन होते हैं। एक शोधक की तरह उनकी आलोचना स्पष्टतः दो धाराओं में चलती है– सिद्धान्त पक्ष और व्यवहार पक्ष। विषय चाहे वस्तुनिष्ठ हो अथवा आत्मनिष्ठ उन्होंने सिद्धान्त का आंकलन कर ही लिया है– प्रकृति क्षेत्र की व्यापकता हो या प्रेम–सौन्दर्य की, सांस्कृतिक–काल्पनिक गहनता, उन्होंने सिद्धान्त के अनुकूल सीमाएँ प्रस्तुत की हैं और कृति–विश्लेषण से भी सिद्धान्त निकाले हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

डॉ रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरूण'बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार थे। उनका गद्य और पद्य दोनों में समान योगदान था। जिसके अध्ययन मात्र से ही अनुसंधान करने वाले डॉ. तरूण की सर्जन धर्मिता की भावप्रवण से परिचित होगें और उनके साहित्य के साथ–साथ शोधार्थियों तथा ज्ञान पिपासुओं का उत्तरोत्तर विकास संभव हो पाएगा। ऐसा शोध सार का उद्देश्य इसमें समाहित है।

काव्य में प्रकृति चित्रण

यह डॉ. 'तरूण' की प्रारम्भिक कृति है। यह एक ऐतिहासिक उपलब्धि की रचना है– क्योंकि प्रारम्भ में प्रकृति–चित्रण को लेकर एकाध पुस्तक ही आई थी : स्वयं लेखक ने स्वीकारा है कि उनका मूल उपजीव्य आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का निबन्ध रहा है, पर इस मूल भित्ति पर लेखक ने जिस भवन का निर्माण किया है, वह भव्य, मनोहर और सरस–ग्राह्य हैं। पूरी पुस्तक के 199 पृष्ठों में लेखक ने विषय के वैविध्य– प्रसार को आगत करने की पूरी कोशिश की है। इसमें छह प्रकरण हैं प्रथम दो प्रकरण तो सिद्धान्त पक्ष के हैं। पहले प्रकरण में प्रकृति के साथ काव्य एवं जीवन के विविध एवं महत्वपूर्ण प्रसंगो का सम्बन्ध निरूपित किया गया है। दूसरा प्रकरण प्रकृति–चित्रण की सैद्धान्तिकी है। इसके अन्तर्गत (1) आलम्बन, (2) उद्दीपन, (3) अलंकार रूप, (4) रहस्यभावना की अभिव्यक्ति, (5) मानवीकरण, (6) उपदेश, (7) पृष्ठभूमि या वातावरण निर्माण, (8) प्रतीक आदि वर्णन प्रकारों का विवेचन किया गया है। तृतीय प्रकरण में संस्कृत एवं अंग्रेजी साहित्य में प्रकृति की उच्चाशयता एवं रचनाकारों के उद्गारों के माध्यम से प्रकृति के माध्यम से प्रकृति की विविध स्वरूपा शक्ति को रूपायित किया गया है। चतुर्थ प्रकरण से मूलतः विषय का प्रारम्भ होता है– जहाँ आदिकाल भक्तिकाल और रीतिकाल के काव्यों में प्रकृति को देखने की दिशा–दृष्टि खुली है। पंचम प्रकरण प्रकृति–प्रेम की उल्लासमयी सहज, प्रसन्न, अन्त,: सलिला का नैसर्गिक भावना के पुनरावर्तन की कहानी है। यह युग

भारतीय राष्ट्रीयता का युग है और राष्ट्रीयता देश के मोहक रूप सौन्दर्य–शोभा का अवलोकन किए बिना सम्भव कहाँ, इन्हीं में देश प्रेम को रेखाकिंत किया है। इसके लिए नये रूपों, नई सज्जाओं और नए सन्दर्भों को उपस्थित किया गया है जो लेखक की स्वीय मौलिक उद्भावनाओं से उपेत हैं। छायावादी प्रकृति–वर्णन–प्रक्रिया में सैद्धान्तिक मान्यताओं का भी अन्वेषण किया गया है।

षष्ठ प्रकरण उपसंहार है जिसमें प्रकृति–सौन्दर्य को कवि की साधना का माध्यम बनाकर 'भरत–वाक्य' से इसका समापन किया है। डॉ. खण्डेलवाल शुक्ल जी के सिद्धान्त को आधारभूत मानकर यह भी सिद्ध करते चलते हैं कि आत्मा की मूल एकता के नाते प्रकृति के नाते प्रकृति से हमारा घनिष्टतम सम्बन्ध है। वह सम्बध प्रेम मूलक है और कविता में कवि का प्रकृति–विषयक–प्रेम उसी सम्बन्ध की गहराई के अनुपात में प्रकट होता है। (पृष्ठ. 45) पर विद्वान आलोचक की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विचार यह है कि साहित्य में वीभत्स से लेकर भक्ति तक के रसत्व को स्वीकारा जा चुका है फिर मानव हृदय की चिर सहचरी, प्रेम–सौन्दर्य की निधि प्रकृति का रसत्व क्यों नहीं ग्राह्य हो सकता है? शुक्ल जी ने साहचर्य जन्य प्रेम की निष्ठा को स्वीकार किया है– डॉ. तरूण ने उसी कसौटी पर यह सिद्ध किया है कि '' प्रकृति अनादिकाल से हमारे हृदय की गम्भीरता जड़ों में रस सीचंती आई है, हमारे जीवन का सारा स्नायु–जाल जिसके रस से अभिसिंचित है, उसके वर्णन में रस की सत्ता न मानना रूढ़िप्रियता व संकीर्ण मनोवृत्ति के अतिरिक्त और क्या है?'' वे प्रकृति–रस की मान्यता की वकालत करते हैं और प्रकृति वर्णन में रसानुभूति की पूर्ण सम्भावना स्वीकारते हैं:

रस के शास्त्रीय ढाँचे के अन्तर्गत प्रकृति–रस के अवयव इस प्रकार होंगे–

आश्रय

कवि या भाव–व्यंजना करने वाला पात्र।

आलम्बन

कोई भी प्राकृतिक दृश्य।

उद्दीपन

दृश्य को देखने पर उसके प्रति जगी भावना को उद्दीप्त करने वाले प्रकृति के क्षण–क्षण बदलने वाले हल्के, गहरे रंग, रूप ध्वनियाँ, आकृतियाँ, पवन–प्रेरितस्पंदन, कम्पन आदि। अनुभाव–रोमांस, कम्प, अश्रु, स्तम्भ, भावोद्गार व प्रारम्भिक उल्लास सूचक हर्ष मुद्राएँ आदि।

संचारी भाव

स्मृति, हर्ष, औत्सुक्य आदि।

इस प्रकार प्रकृति वर्णन में रसानुभूति की पूर्ण संभावना हैं।'

यह डॉ. खण्डलेवाल की युक्तियुक्त मान्यता है।

आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य

आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य डॉ. खण्डेलवाल का शोध–प्रबन्ध है। डॉ. नगेन्द्र के अनुसार '' शोध के लिए प्रेम और सौन्दर्य जैसे स्निग्ध विषय का चयन भी उनकी परिष्कृत भावुक वृत्ति का परिचायक है। शोध–प्रबन्ध कहने से प्रायः एक रूक्ष तथ्य– शोधात्मकता का चित्र उभरता है। शोध और आलोचना में मौलिक अन्तर मात्र इतना है कि शोध आलोचना से अपना दामन–बचाकर चलाता है– यह कुछ अंशों में सही भले हो जाय, पर इसकी सार्वत्रिक सत्यता प्रमाणित नहीं की जा सकती है और विशेष रूप से डॉ. खण्डेलवाल के साहित्य में तो नहीं। इनके शोध प्रबन्ध तत्व–चिन्तन से भरे–पूरे हैं। वृत्त की अपेक्षा विचारों की वहाँ बहुलता है। प्रेम और सौन्दर्य शब्द गम्भीर एवं व्यापक हैं और उसके विवेचन के आधार–फलक भी विस्तृत हैं। इसलिए इनके विवेचन में तात्विक दृष्टिकोण ही अनुसन्धाता को सफलता दिला सकता है। पर इसमें एकांगी बुद्धि व्यवसायिकता के कारण रूक्षता और जड़ता के आने के खतरे भी थे। डॉ. खण्डेलवाल ने स्वीकार किया है रूक्षता और जड़ता से बचने के लिए ही मैंने तथ्य– शोध को ज्ञान–विज्ञान की विशाल साधना के आनन्द का प्रतीक बनाया है, जो वास्विक रूप में उनकी चेतना को सहज ग्राह्य हो गया है।

प्रेम और सौन्दर्य विषय की ग्राह्यता डॉ. खण्डेलवाल के मन के अनुकूल हैं : यह एक ओर जहाँ उनकी नैसर्गिक सृजन–प्रेरणा के साथ पूरा धूप–छाँह की तरह घुल–मिलकर उन्हें तृप्ति का–सा आनन्द देता– सा लगा, वहीं दूसरी ओर विद्वान आलोचक के सामने यह वैज्ञानिक विश्लेषण और साहित्यिक अनुसंधान के लिए गम्भीर, विस्तृत और उर्वर परिसर का आधार प्रस्तुत करता है। डॉ. साहब ने इस विषय को स्वीकार करते हुए मानों 'मनोवैज्ञानिक तथ्यों के सूखे डंठलों को विषय की प्रकृत माँग के कारण जीवन चेतना की लाली और हरीतिमा प्रदान की है डॉ. साहब ने शील–संयम और शालीनता के माध्यम प्रेम–सौन्दर्य की उदात्त भावना को शुद्ध मानवीय परिवेश में प्रस्तुत कर उसमें एक सांस्कृतिक प्राणभूत तत्व प्रेषित किया है।

प्रेम और सौन्दर्य की सार्थकता बतलाते हुए लेखक ने कहा है कि सौन्दर्य प्रेम में ही संश्लिष्ट है। यह सच है कि जहाँ प्रेम है वहाँ सौन्दर्य है। लेकिन सौन्दर्य के प्रति छायावादी कवियों का एक निजी दृष्टिकोण है। इसलिए उसे निरूपित करने के लिए सौन्दर्य का आधार ग्रहण करना ही था। प्रेम की लेखक ने दो जीवन दृष्टियाँ प्रदान की है –(1) मानवीय प्रेम जो अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच कर ईश्वर प्रेम का स्वरूप ग्रहण कर लेता है और (2) आध्यात्मिक प्रेम जो ऐन्द्रियता से बिल्कुल परे है। उन्होंने दोनों ही जीवन–दृष्टियों को मिलाकर 12 कोटियों में प्रेम का अत्यन्त युक्ति संगत वर्गीकरण किया है। प्रथम प्रेम को उन्होनें द्वितीय प्रेम की छाया माना है जबकि आध्यात्मिक प्रेम मुक्तिदायिनी है। लेखक ने स्वीकारा है कि काव्य का मूलभूत उद्देश्य प्रेम के मौलिक एवं सार्वभौमिक रूप को विविध अधिकरणों में ढालकर उसका निरूपण करना है। कवि मानव–प्रेम सम्बन्धों के माध्यम से ही चैतन्य को जाग्रत करता है।

पूरा प्रबन्ध छह लम्बें प्रकरणों में समाप्त होता है। प्रथमतः लेखक ने एक विस्तृत भूमिका प्रस्तुत की है। यह भूमिका जैसा बताया गया है। ऐतिहासिक आधार भूमि को देखने की सार्थक कोशिश की गई है। मूलतः यह वर्तमान को अतीत के ऐतिहासिक सन्दर्भ में देखने का

प्रयास है जो विद्वान लेखक के ऐतिहासिक सातत्य का परिचायक है।

प्रथम प्रकरण ही मूलतः प्रबन्ध का मेरूदंड है, जिसे लेखक ने भी स्वीकारा है। यह प्रेम और सौन्दर्य विवेचन का शास्त्रीय पक्ष है और इसी शास्त्रीयता की व्याख्या अन्य प्रकरणों में की गई है। प्रेम और सौन्दर्य के विवेचन में लेखक ने ऐतिहासिक विश्लेषणात्मक और और अनुसन्धानात्मक पद्धतियों के सहारे प्रेम और सौन्दर्य का वर्गीकरण एवं विवेचन प्रस्तुत किया है। प्रेम और सौन्दर्य को लेकर विविध आलोचकों में अस्तित्व की बुनियादी बातों में परस्पर मत वैभिन्य हैं, किंतु डॉ. तरूण ने दो टूक स्थापनाओं के माध्यम से यह प्रमाणित करने की कोशिश की है कि प्रेम और सौन्दर्य मूलतः हमारी आत्मा से सम्बद्ध हैं और सम्भवतः यही कारण है कि प्रेम और सौन्दर्य कविता के आदि विषय हैं। ईश्वर की तीन विभूतियाँ मानी गई हैं– शक्ति, शील और सौन्दर्य। यह सौन्दर्य मूलतः आनन्द से सम्बद्ध है।

दूसरा प्रकरण भारतेन्दु काल में प्रेम और सौन्दर्य के अनुपयोगी स्वरूप को उपस्थित करता है। यह रीतिकाल के ठीक बाद आने के कारण पुरानी और नवीन पद्धति का संगम स्थल या सन्धि स्थल है। जहाँ तक ऐतिहासिकता का प्रश्न है भारतेन्दु काल का प्रेम–सौन्दर्य रीतिकवियों का अनुकरण है। इस काल में प्रेम की त्रिवेणी बहती है। इस युग में एक ओर तो लौकिक प्रेम की कर्पूरी आरती सजाई गई है, जबकि दूसरी ओर भक्ति भावना और अलौकिक अरूप की छवियाँ भी अंकित की गई हैं। लौकिकता की ही एक धारणा से राष्ट्र प्रेम की उत्पत्ति होती है। विद्वान आलोचक ने भारतेन्दु–युग को तीन प्रेम–धरातल देकर दो की चर्चा की है– (1) प्रशय अथवा दाम्पत्य, (2) मानव व देशप्रेम और, (3) प्रकृतिप्रेम।

तीसरा प्रकरण द्विवेदी युग है। द्विवेदी काल भारतेन्दु काल से कई मानो में विशिष्ट है। परम्परागत प्रेम व दाम्पत्य प्रेम की परिधि में विस्तार हुआ और इस क्रम में सौन्दर्य भी धीरे–धीरे स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर अग्रसरित हुआ। इस युग में मानव प्रेम एक नवीन महिमा से मंडित हुआ और वह जीवन की एक पवित्रता तथा महत्ता पहली बार दिखाई पड़ी। कवियों ने उज्ज्वल मानवीय प्रेम का गुणगान कर लोकोत्तर पावना की प्रतिष्ठा की। प्रसाद जी ने प्रेम पथिक में प्रेम की राह अनोखी बतलाई। विद्वान आलोचक ने सिद्ध किया है कि द्विवेदी युग की प्रेमपरक उपलब्धि में एक महत्वपूर्ण संस्करण यह है कि यहाँ ईश्वर भक्ति के स्वरूप में एक युगान्तकारी परिवर्तन उपस्थित हुआ। तात्पर्य यह कि भक्ति भावना में बौद्धिकता ने युगानुरूप हस्तक्षेप किया है। परिणामतः युग का ईश्वर बुद्धिपरक हो गया। इसका परिणाम नवीन विचारों के आवेश से काव्य उपदेश प्रधान हो गया,रागात्मक अभिव्यंजना नहीं हो सकी।

चौथा प्रकरण छायावाद–काल है। छायावाद प्रेम और सौन्दर्य का काल है। छायावाद, मानवतावाद, स्वच्छन्दतावाद, अन्तर्जगत का विश्लेषण, लालित्य के प्रति आकर्षण, रहस्यभावना, मानवीकरण आदि विशेषताएँ लेकर साहित्य में अवतरित हुआ। पुराने युग–खंड में और छायावाद में मूल अन्तर यह है कि जहाँ पुराने कवि निर्गुण को भी साकार देखने के पक्ष में थे, वहीं ये कवि प्रत्यक्ष को और भी गूढ़ परोक्ष रूप से देखना चाहते है। और स्वभावतः रहस्य और अलौकिकता के दर्शन होने लगते है।

पाँचवाँ प्रकरण प्रगतिवाद–प्रयोगवाद का है। प्रगतिवाद में सूक्ष्मता फिर स्थूलता पर आकर टिक गई। छायावाद और प्रगतिवाद दोनों दो अतियों पर खड़े है एक सूक्ष्म की और ले जा रही है दूसरी स्थूल की ओर। रसानुभूति के लिए दोनों का सहसामंजस्य अपेक्षित है। प्रयोगवाद प्रगतिवाद का ही अंग है। प्रयोगवाद काव्य शैली सम्बन्धी प्रयोग तथा दमित अकथित भावनाओं की स्वच्छन्द अभिव्यक्ति भी। इसलिए तो जो नीति–मर्यादा के कारण अनकही–अनगाई रह गई है– उसकी अभिव्यक्ति प्रयोग है। प्रगतिवाद दलित उपेक्षित श्रमजीवियों के प्रति प्रेम प्रकट करता है जबकि प्रयोगवाद कुंठित मन के काव्यात्मक विश्लेषण में व्यस्त है सौन्दर्य वहॉ अलंकारहीन है– वाणी मेरी चाहिए तुम्हें क्या अलंकार।'

छठा प्रकरण उपसंहार है। विद्वान आलोचक ने लिखा है कि आधुनिक हिन्दी काव्य का प्रेम–काव्य अपने आदर्श से दूर दिखाई देता है। उनकी धारणा है कि काव्य में प्रेम और सौन्दर्य की भावनाओं के निरूपण का अन्तिम ध्येय मानव का पूर्ण विकास है। प्रकृति और सौन्दर्य की पूर्णता तभी हो सकती है जब एक पूर्ण जीवन–दर्शन के रूप में जीवन के आदर्श और यथार्थ सूक्ष्म और स्थूल दोनों पक्षों का मधुर एवं सुखद सामंजस्य हो तभी पूर्ण प्रेम का स्वरूप प्रतिष्ठापित होगा और तभी कवि की वाणी मानव मन की सम्पूर्ण पर व्यापक प्रभाव डालने वाली होगी। अभी हिन्दी प्रेम काव्य इस सीमा तक नहीं पहँचा है। प्रेम जब आत्मा तक केन्द्रित हो तब वह दोषपूर्ण होता है। डॉ. खण्डेलवाल प्रेम और सौन्दर्य के इस आदर्श को स्वीकारते चलते है।

अपने में सब कुछ भर कैसे व्यक्ति विकास करेगा।
यह एकान्त स्वार्थ भीषण है अपना नाश करेगा।

जयशंकर प्रसादः वस्तु और कला

'जयशंकर प्रसादः वस्तु और कला' डॉ. खण्डेलवाल की तीसरी अनुसन्धानात्मक– आलोचनात्मक कृति है। यह कृति भी उनकी प्रेम सौन्दर्यपरक आलोचनात्मक संदृष्टि का प्रमाण है। उनकी यह संदृष्टि विशिष्ट परिवेश में दृश्य है– उन्होंने प्रेम और सौन्दर्य की परिधि को विस्तृति तो दी है साथ ही गहराई की ओर भी उसे अभिमुख किया है। इसी दृष्टि पथ में डॉ. तरूण को प्रेम और सौन्दर्यवादी कवि के रूप में जयशंकर प्रसाद मिले है। प्रसाद जी का सारा जीवन और काव्य प्रेममय है। – उन्होंने एक परम प्रेममय का अनुभव किया है और उनका सारा काव्य भी उसी के प्रति संवेद्य है। सौन्दर्य के सम्बन्ध में तो प्रसाद जी की स्पष्ट धारणा रही है कि सौन्दर्य उपभोग्य है – इस सम्बन्ध में प्रसाद जी कभी द्विधाग्रस्त नहीं रहे हैं।

प्रस्तुत पुस्तक दस प्रकरणों में विभक्त है। इन दस प्रकरणों के माध्यम से प्रसाद के समग्र साहित्य और उनकी मेल धारणाओं को देखने का प्रयास किया गया है। प्रथम प्रकरण रूप प्रकरण है। इसमें रूप पर पाश्चात्य और पौरस्त्य साहित्य शास्त्रियों के अभिमत का उल्लेख करते हुए रूप ही दृष्टि को स्पष्ट किया गया है तथा इस

संबंध में जयशंकर प्रसाद को क्या धारणा है इसका सम्यक् परीक्षण करते हुए रूप की धारणा को सम्पुष्ट किया गया है,एवं कवि के साहित्य रूपों की सम्यक् विवेचना करते हुए अपनी मौलिक धारणा का यदा–कदा परिचय प्रस्तुत किया गया है। रूप के सम्बन्ध में प्रसाद जी की निश्चित धारणा है कि श्रोता, पाठक और दर्शकों को हृदय में कविकृत–सी प्रतिमा की जो अनुभूति होती है उसे सहृदयों में अनुभूति नहीं कर सकते .....

इसलिए व्यापकता आत्मा की संकल्पात्मक अनुभूति की है। इस बात की सत्यता प्रमाणित करते हुए ही आलोचक महोदय ने यह प्रमाणित किया है कि वस्तुतः अनुभूति ही प्रमुख है, अनुभूति वास्तविक सम्बन्ध है कल्पना तो साधन मात्र है इसी प्रकरण में स्कन्दगुप्त नाटक को सुखान्त बतलाया गया है। जबकि आलोचकों की मान्यता है कि यह प्रसादान्त है। विद्वान आलोचक ने प्रेम के आत्मिक धरातल पर दो आत्माओं (स्कन्द और देवसेना) का सूक्ष्म मिलन अभीष्ट करवा दिया है जो परस्पर जन्मान्तरीय विश्वासों के आलोक मधु में डूब जाते हैं।

दूसरा प्रकरण भाव या रस के स्वरूप विश्लेषण का है। रस या भाव शास्त्रीयता से ओत–प्रोत है। प्रसाद जी की धारणा इस संबंध में उदात्त है। उन्होंने अभिनव गुप्त और उज्जवलनीलमणि वाली रस सृष्टि को प्रमुखता दी है। डॉ. खण्डेवाल ने यह स्पष्ट किया है कि प्रसाद जी पाठकों को ऐसी उदात्त भावभूमि पर ले जाते है जहाँ पाठक का हृदय सत्व मात्र रह जाता है और वह अणु से विराट होने लगता है सारे बन्धन टूटने लगते है और हमारी भावना कवि हृदय के साथ अपनी मूल परम भावमयी सत्ता के साथ मिल जाती है–कामायनी का निर्वेद सर्ग, आँसू, झरना, स्कन्दगुप्त, आकाशदीप आदि में हम भावोदय का अनुभव करते है जिसका संकेत सत्वोद्रेकाद् खंडस्वप्रकाशानन्द चिन्मयः में निहित है औरयही तो लोंजानस का उदात्त तत्व है।

तृतीय प्रकरण विचार और दर्शन का है जिसमें प्रसाद की दार्शनिक अन्तर्दृष्टि के मूल को दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में समझाने का प्रयास किया गया है। साथ ही दर्शन के क्षेत्र में उनकी विशिष्ट उपलब्धियों पर प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत प्रकरण में विद्वान आलोचक ने प्रसाद जी के विचारों–राजनीतिक,, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, दार्शनिक आदि को उनकी रचनाओं में व्यक्त सन्दर्भो के धरातल पर स्पष्ट किया है। यह कार्य नितान्त अनुसंधान और विशेषणपरक है। साथ–ही–साथ इसकी तह में जाकर यह स्पष्ट किया गया है, कि प्रसाद जी की विचारधारा सर्वत्र उदात्त है, समरस है और आनन्दमय। उनके विचार या तो रचनाओं की भूमिका में आए है या निबन्धों में या फिर सूक्तियों या शाश्वत कथनों में या फिर कथा साहित्य पात्रों के जीवन–व्यापारों में चरितार्थ होते हैं या संवादों के माध्यम से विवेचित–विश्लेषित या उपसंहारों में ध्वनित–व्यंजित। डॉ. खण्डेलवाल ने यह प्रमाणित किया है कि प्रसाद मूलतः आनन्दवादी विचारक है जो जीवन और संसार के रूप के निदर्शन में उत्साही हैं यह व्यक्ति, समाज, मानव और विश्व के सुन्दर एवं कल्याणकारी रूप को ही वे प्रश्रय देते है।

चतुर्थ प्रकरण प्रसाद की चरित्र सृष्टि है। विधाता की सृष्टि की तरह ही साहित्य की सृष्टि भी अवधारियों से अकीर्ण है मूलतः पात्र दो प्रकार के होते हैं– काल्पनिक और यथार्थ जगत के पात्र। प्रसाद ने सैकड़ो पात्रों की सृष्टि की है जिसके पीछे एक गहरी प्रेरणा भी है। प्रसाद ने विशालफलक पर पात्रों की सृष्टि की है, उनके साहित्य में सभी वर्गो के पात्र देखे जा सकते है। चाहे नारी पात्र हो या पुरूष पात्र–सब पक्षों या स्तरों का सूक्ष्म दृष्टि के साथ निरीक्षण–परीक्षण किया है। पात्रों का अन्तर्द्वन्द्व प्रसादकी निजी विशेषता है, किन्तु इस सन्दर्भ में विद्वान आलोचक ने तर्कसंगत तथ्य प्रस्तुत करते हुए कहा है कि इन अन्तर्द्वन्द्वों की सृष्टि प्रसाद का काम्य नहीं।

पाँचवाँ प्रकरण इतिहास, सभ्यता और संस्कृति के सन्दर्भ में उनके साहित्य का मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के अनुसार प्रसादजी ने इतिहास को जीवन से संयुक्त करके मांसल एवं प्राणवान बना दिया है। इतिहास तो बाह्य विकास है, उनकी अन्तः प्रेरणा तो दर्शन है। आलोचक ने यह अभिमत स्पष्ट किया है के इतिहास तभी सार्थक है, जब वह दर्शन के साथ राष्ट्रीय संस्कृति का अविच्छिन्न अंग बन जाए। दर्शन, जीवन और इतिहास और राष्ट्रीयता सभी मिलकर सच्चे इतिहास की सृष्टि करते हैं।

षष्ठ प्रकरण प्रकृति का है। प्रकृति प्राण कवि प्रसाद की विशिष्ट छवियों का विश्लेषण–विवेचन प्रस्तुत करते हुए आलोचक ने प्रसाद के कौशल को परखने का प्रयास किया है। प्रकृति प्रसाद के लिए जड़ सत्ता या प्रेमवस्तु मात्र नहीं है बल्कि वह विश्वात्मा का प्रतिबिम्ब है। शिव का शरीर या चैतन्यपूर्ण आत्मा का प्रकाशन है। प्रसाद ने प्रकृति को उद्दीपन रूप में ग्रहण किया है किन्तु प्रकृति के आलम्बन रूप का भी महत्व उनके साहित्य में है। प्रसाद ने प्रकृति से बहुत सारे कार्य कराये है। उनकी प्रकृति कहीं उपदेश देती है, सामान्य जीवन के तथ्यों की व्यंजना करती है–रहस्य एवं आध्यात्म की अभिव्यंजना भी करती है।

सातवाँ प्रकरण सौन्दर्य का है, जिसमें विद्वान आलोचक ने प्रसाद की सौन्दर्य दृष्टि का उद्घाटन कर उसके मार्मिक पक्षों का साक्षात्कार कराने का प्रयास किया है। डॉ. खण्डेलवाल ने सौन्दर्य के चार भेद किये हैं– शारीरिक, मानसिक, प्राकृतिक, कलागत। प्रसाद सामाजिक दृष्टि से प्रवृतिवादी है, साहित्यिक दृष्टि से रसवादी है, और दार्शनिक दृष्टि से आनन्दवादी है। ये तीनों दृष्टियाँ संश्लिष्ट होकर जगत, मानव और प्रकृति को एक नवीन दृष्टि से देखने की प्रेरणा देती है जो इसमें एक निहित सौन्दर्य को नेत्रों के सम्मुख पहुँचा दे। डॉ. खण्डेलवाल ने स्पष्टता प्रमाणित किया है कि प्रसाद में सौन्दर्य अनुभूति वय क्रम से क्रमशः गम्भीर होती चली गयी है और इस अनुपात में सौन्दर्य चित्रण सूक्ष्म होता चला गया है। स्थूल रूप सौन्दर्य का पतन दिखाकर प्रसाद ने सर्वत्र सौन्दर्य की उच्च भूमिका का निर्वाह किया है। इस दृष्टि से प्रसाद हिन्दी साहित्य में प्रथम सौन्दर्य चेता है। अतः सौन्दर्य के सम्दर्भ में प्रसाद का ऐतिहासिक महत्व तो है ही तात्विक महत्व भी है।

अष्टम प्रकरण के प्रसाद का कल्पना विलास है। जहॉ प्रसाद की सूक्ष्म, गम्भीर और उत्कृष्ट कल्पना छवियों का अंकन किया गया है। प्रसाद साहित्य में कल्पना का प्रचुर प्रयोग प्रायः संगठन और चरित्र निर्माण में उपमान पक्ष के निर्माण में, मानवीकरण में, काल्पनिक आनन्दलोक के निर्माण में हुआ है।

नवम प्रकरण प्रसाद की कला का तात्विक विवेचन–विश्लेषण करता है। प्रसाद जी मानवीय अनुभूतियों के कवि है किन्तु अनुभूतियों को महत्व देते हुए वे कला संवर्द्धन की और उत्साही है। यह कहा जा सकता है कि उन्होने दोनों को निकट लाने का प्रयास किया है, किन्तु पुरस्कारता उनकी अनुभूतियों की ही है। किन्तु कला के क्षेत्र में उनका श्रेय युगान्तकारी है। वे वस्तुवादी नहीं है और न अभिव्यंजनावादी है फिर भी उन्होने वस्तु और कला का एक ऐसा समायोजन किया है जो सहृदयों का तृप्ति–घर है।

दशम प्रकरण मूल्य और मूल्यांकन का है इसमें यह प्रतिपादित किया गया है कि प्रसाद के कला मूल्य अपने जीवन मूल्यों से ही शक्ति ग्रहण करते है, उन्होने कला की आराधना जीवन–मूल्यों की उपेक्षा करके नहीं की है।

हर आलोचक की अपनी जीवन दृष्टि है और उसकी आलोचना जाने–अनजाने प्रभावित होती रहती है। यह जीवन दृष्टि कहीं न कहीं किसी न किसी रचनाकार से भावगत अथवा विचारगत धरातल पर जुड़ी हुई रहती है ऐसा आलोचक की कृतिकार विशेष की सही परख एवं पहचान कर पाता है। आचार्य रामचन्द्रशुक्ल ने तुलसी और जायसी को, डॉ. रामविलास शर्मा ने निराला को, डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी ने अज्ञेय को इसी रूप में समझा है। आज जयशंकर प्रसाद के दर्जनों आलोचक है किन्तु सही जीवन दृष्टि, सम्यक भाव बोध, विचारदर्शन आदि के उत्कृष्ट धरातल पर प्रसाद की परख और पहचान करने वाला अगर कोई है तो वह आलोचक डॉ. खण्डेलवाल ही होंगे। इसी से उनकी आलोचना परिचालित है। कोई आलोचक एक ही विषय के विविध आयामों को लेकर बार–बार लिखता है, फिर भी जो मानक कार्य होना चाहिए या जिसकी अपेक्षा की जाती रही है। वह सम्भव नहीं हो पाता है। पर डॉ. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल की हर कृति मानक सिद्ध होती है। उनकी पुस्तक 'जयशंकर प्रसादः वस्तु और कला' जिस पर उन्हें डी.लिट् की उपाधि दी गई थी। हिन्दी के दो चार उत्कृष्ट सोपाधि प्रबन्धों में से एक है। इससे एक श्रेष्ठ सही प्रबन्ध लेखन का मानक स्थिर हुआ है। इसे प्रसाद साहित्य का इनसाइक्लोपीडिया माना जाना चाहिए। आज की विशेषता के युग में श्रेष्ठ आलोचक की अपनी एक विशेषता होती है। रचनाकार या आलोचक के लेखन का अपना एक क्षेत्र होता है। डॉ. खण्डेलवाल ने आरम्भ से ही आलोचना को क्षेत्र चुना था। उस पर जिस रूप में विस्तार किया था, वह उनकी विशेषज्ञता को जाहिर करता है। हिन्दी में वे प्रेम और सौन्दर्यमूलक जीवन दृष्टि, सैद्धान्तिकी, काव्य विकास और कवि के अकेले विशेषज्ञ थे।

निष्कर्ष

भारतीय संस्कृति के महान व्यक्तित्ववादी कवि तथा हिंदी साहित्य के ऊर्जावान कीर्तिस्तंभ डॉ. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरूण' के समीक्षक व शोधक वाले अध्ययनशील व्यक्तित्व का स्पर्श पाकर पाठक, शोधक, आचार्य तथा अनुसंधित्सु लाभान्वित होंगे। उपर्युक्त पत्र में कवि की काव्य के प्रति नवीनतम अनुभूतियां चिर पिपासु के हृदय की पिपासा को आंदोलित करने का सार्थक प्रयास करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

डॉ.'तरूण' दृष्टि और सृष्टि, डॉ.शांति स्वरूप गुप्त, सूर्य प्रकाशन, दिल्ली; 1978

डॉ. 'तरूण' सर्जन के चरण, संपादक डॉ. ओमानन्द, सारस्वत, चिन्ता प्रकाशन, दिल्ली; 1981

डॉ. 'तरूण' का गद्य साहित्य, डॉ. राजपति, उन्मेश प्रकाशन, रोहतक, हरिद्वार; 1992

डॉ. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल' तरूण' के काव्य का शैली वैज्ञानिक अध्ययन, लाल सिंह, चौ.चरण सिंह वि.वि. मेरठ;1994

कवि.'तरूण' का काव्यः संवेदना शिल्प, संपादक डॉ.संतोष कुमार तिवारी, उन्मेश प्रकाशन, रोहतक, हरिद्वार; 1990

कवि.' तरूण': सर्जन के नए क्षितिज, संपादक तपेश्वर नाथ, यतीन्द्र साहित्य सदन, भीलवाड़ा (राजस्थान)

गीतात्मा कवि तरूण :दृष्टि और सृष्टि, संपादक डॉ. सुंदरलाल कथूरिया, भावना प्रकाशन, दिल्ली, 2000

तरूण काव्य में प्रेम और सौंदर्य,डॉ.रामकुमार शर्मा, उन्मेश प्रकाशन, रोहतक, हरिद्वार; 1993